SL-1. Aug-1

(1)

Date: 6 Aug 2020.

ब्रिटिशकाल में भारत में अंग्रेजी शिक्षा का विकास

ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के भारत में प्रारंभिक शासन काल के समय भारत में शिक्षा का परंपरागत स्वरूप ही मौजूद था। हिन्दुओं में ज्ञान एवं शिक्षा प्रदान करने के लिए मंदिरों में ही पाठशालाएँ एवं गुरुकुल हुआ करते थे जहाँ संस्कृत भाषा एवं धार्मिक ज्ञान दिया जाता था वहीं मुसलमानों में मकतब (प्राइमरी स्कूल) और मदरसों (हाईस्कूल) का रिवाज था जहाँ उर्दू, अरबी एवं फारसी भाषाओं की शिक्षा एवं धार्मिक शिक्षाएँ दी जाती थीं। विज्ञान विषय की शिक्षा अपेक्षाकृत कम दी जाती थी। धीरे-धीरे ईस्ट इंडिया कंपनी के शासकों ने देश चलाने के लिए अंग्रेजी को शिक्षा के एक माध्यम के रूप में अपनाया एवं पुरानी शिक्षा पद्धति के स्थान पर अंग्रेजी माध्यम पर आधारित एक नई शिक्षा प्रणाली की स्थापना से यहाँ विदेशी अंग्रेजों को काफी फायदा हुआ।

ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन के प्रारंभिक काल में भारत में शिक्षा के प्रसार हेतु कोई उल्लेखनीय प्रयास नहीं किए गए थे। कुछ उदार अंग्रेजों, ईसाई मिशनरियों और उत्साही भारतीयों ने शिक्षा के प्रसार हेतु कतिपय प्रयत्न किए थे परन्तु कोई निश्चित दिशा न थी और न कोई लक्ष्य था। 1781 ई० में गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स ने कलकत्ता मदरसा की स्थापना की थी जिसमें फारसी और अरबी का अध्ययन किया जाता था। 1784 ई० में सर विलियम जोन्स ने 'एशियाटिक सोसायटी ऑफ बंगाल' की स्थापना की थी जिसने प्राचीन भारतीय इतिहास और संस्कृति के अध्ययन का पथ प्रशस्त किया था। ब्रिटिश रेजीडेण्ट जोनाथन डंकन द्वारा 1791 ई० में वाराणसी में हिंदू कानून और दर्शन के अध्ययन हेतु संस्कृत कॉलेज स्थापित किया गया था। 1800 ई० में लार्ड वेलेजली द्वारा कंपनी के असैनिक अधिकारियों की शिक्षा के लिए फोर्ट विलियम कॉलेज स्थापित किया गया था। अंग्रेज धर्मप्रचारक एवं ईसाई मिशनरियों ने भारत में शिक्षा के प्रसार हेतु (सेरामपुर (कलकत्ता) को अपना केन्द्र बनाकर बाईबिल का 26 भाषाओं में अनुवाद किया था) 1820 में डेविड हेयर नामक एक अंग्रेज ने कलकत्ता में विशप कॉलेज स्थापित किया। राजा राम मोहन राय, डेविड हेयर और सर हाईड ईस्ट ने संयुक्त होकर कलकत्ता में हिन्दू कॉलेज स्थापित किया था जो बाद में प्रेसीडेन्सी कॉलेज के नाम से प्रसिद्ध रहा।

अ-1. Ang-1

ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा भारत में शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रयास 1813 ई० से किए गए थे। 1813 ई० के चार्टर एक्ट में ईस्ट इंडिया कंपनी के गवर्नर जनरल को यह अधिकार मिला कि वह एक लाख रुपए साहित्य के पुनरुद्धार और उन्नति के लिए और भारत में स्थानीय विद्वानों को प्रोत्साहन देने के लिए तथा अंग्रेजी प्रदेशों के वासियों में विज्ञान के आरंभ और उन्नति के लिए खर्च करे। लेकिन कंपनी ने इस धनराशि का उपयोग 1823 तक नहीं किया था।

1823 में गठित लोक शिक्षा की सामान्य समिति के दस सदस्य भारत में शिक्षा के माध्यम को लेकर दो वर्गों में विभक्त हो गए थे, एक वर्ग 'प्राच्य विद्या समर्थक' Orientalist था एवं दूसरा वर्ग आंग्ल शिक्षा समर्थक (Anglicists) था। प्राच्य शिक्षा समर्थक दल के नेता H.T. Princep तथा एच० एच० विल्सन थे। इनका कथन था कि भारत में संस्कृत और अरबी के अध्ययन को प्रोत्साहित किया जाए भारत में पाश्चात्य विज्ञान और ज्ञान का प्रसार इन्हीं भाषाओं के माध्यम से किया जाए।

आंग्ल शिक्षा समर्थक दल के नेता मुनरो और एलफिंस्टन पाश्चात्य शिक्षा को स्थानीय देशी भाषा के माध्यम से देने की पैरवी कर रहे थे परन्तु आंग्ल-शिक्षा समर्थक दल के सदस्य भारत में शिक्षा के माध्यम के रूप में 'अंग्रेजी' के पक्षधर थे। वे भारत पर पश्चिमी मानदण्डों को आरोपित करने के लिए दृढ़ संकल्पित थे। प्राच्य-पाश्चात्य विवाद को हल करने के लिए तत्कालीन गवर्नर जनरल विलियम बैंटिंक ने अपनी कौंसिल के विधि सदस्य लार्ड मैकाले को लोक शिक्षा समिति (बंगाल) का प्रधान नियुक्त कर उन्हें शिक्षा के माध्यम पर अपना विवरण-पत्र प्रस्तुत करने का निर्देश दिया। अंततः 2 फरवरी 1835 ई० को मैकाले ने अपना स्मरणार्थ प्रलेख (Macaulay Minutes) प्रस्तुत किया। मैकाले ने भारतीय भाषा और साहित्य की कटु आलोचना की तथा आंग्ल भाषा एवं साहित्य की प्रशंसा करते हुए कहा कि 'यूरोप के एक अच्छे पुस्तकालय की आलमारी का एक कोना भारत और अरब के समस्त साहित्य से अधिक मूल्यवान है।'' मैकाले भारत में अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार द्वारा एक ऐसा वर्ग तैयार करना चाहता था जो रक्त एवं रंग से भारतीय हो परन्तु उसकी प्रवृत्ति, विचार, नैतिक मापदण्ड और प्रज्ञा अंग्रेज सदृश हो अर्थात् वह ब्राउन रंग के अंग्रेजों का एक वर्ग चाहता था। कंपनी को अपने बढ़ते हुए साम्राज्य के प्रशासनिक कार्यों के लिए अंग्रेजी जानने वाले clerk/लिपिकों की जरूरत थी और ऐसा अंग्रेजी भाषा के प्रसार से ही किया जा सकता था।